ISSN : 2278-8344
वर्ष–14, विशेषांक–2
अप्रैल, 2025

कवितांजलि
KAVITANJALI

विशेषांक

बिजनौर विभूति एवं ग़ज़ल सम्राट दुष्यंत कुमार की स्मृति में

साहित्य की धरोहर : कविता और ग़ज़ल

Editor in Cheif
Prof. Dharmendra Kumar

Advisory Board

Prof. P.K. Joshi
HNB Garhwal University, Srinagar (Garhwal)

Prof. S.C. Agarwal
C.S.J.M. University, Kanpur

Prof. P.K. Mishra
NIEPA, New Delhi

Prof. Gaurav rao
University of Delhi, New Delhi

Prof. C.M . Jain
Vardhaman College, Bijnor

Prof. Santosh Arora
M.J.P. Rohilkhand University, Bareilly

Prof. Poonam Sharma
J.V. Jain College, Saharanpur

Dr. Amit Gautam
NIEPA, New Delhi

Editorial Board

Prof. Sunil Kumar Joshi
Vardhaman College, Bijnor

Prof. Preety Agarwal
D.A.V. (PG) College, Muzafarnagar

Dr. Shikha Tiwari
Baba Bhimrao Ambedkar University, Lucknow

Dr. Peeyush Kamal
NCERT, New Delhi

Dr. Suresh Singh
R.B.D. Mahila Mahavidyalya, Bijnor

Dr. Nida Khan
Vardhaman College, Bijnor

Prof. Rajeev Kumar
N.A.S. College, Meerut

Dr. Dorilal
Jamia Milia Islamia, New Delhi

Dr. Akhilesh Chandra
Govt. P.G. College, Gopeshwer (Chamoli)

Dr. Harish Yadav
RCU Govt. PG College, Uttarkashi

Editor-in-Chief
Prof. Dharmendra Kumar

अतिथि सम्पादक मण्डल

प्रधान सम्पादक

प्रो. शशि प्रभा

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

सम्पादक

डॉ. अंजु बंसल

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

सह सम्पादक

डॉ. ओ.पी. सिंह

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

सम्पादन सहयोग

डॉ. रीना प्रताप सिंह

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

डॉ. पूजा सिंह

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

डॉ. आयुष बघेल

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

1. साठोत्तरी हिन्दी ग़ज़ल और युग संघर्ष–डॉ0 अंजू बंसल	01–04
2. समाज, साहित्य और संस्कृति का अंतर्संबंध–अंशुल कुमार	05–07
3. हिन्दी कविता में व्यंजित मानवीय मूल्य–डॉ0 शशि प्रभा एवं अंशु देवी	08–12
4. आम जन की पीड़ा के पक्षधर ग़ज़लकार दुष्यंत कुमार–आदिल खान	13–16
5. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श और सामाजिक बदलाव–तपस्या रानी वर्मा	17–20
6. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श और सामाजिक बदलाव–श्रीमती दीपाकान्ती निषाद	21–23
7. जनकवि दुष्यन्त कुमार–डॉ0 पूजा सिंह	24–27
8. साहित्य और संस्कृति का अन्त:सम्बन्ध–बलबीर सिंह एवं डॉ0 धर्मेन्द्र कुमार	28–33
9. दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में सामाजिक और राजनीतिक विमर्श–रजनीश कुमार एवं डॉ0 ओ0पी0 सिंह	34–36
10. दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में राष्ट्रीयता–डॉ0 रीना प्रताप सिंह	37–39
11. हरि की भूमि हरि अनंत हरि कथा अनंता धर्म कवि सूर्य कवि शिरोमणि कवि न भूतो न भविष्यति–प्रो0 रोहताश जमदग्नि	40–44
12. बिजनौर के गौरव : ग़ज़लकार निश्तर खानकाही–प्रो0 शशि प्रभा	45–48
13. हिन्दी साहित्य में ग़ज़ल लेखन की परंपरा साये में धूप के विशेष सन्दर्भ में –सचिन कुमार	49–52
14. दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों में जन पक्षधरता–डॉ0 ओ0 पी0 सिंह	53–56
15. साहित्य और सामाजिक उन्नयन–प्रो0 प्रीति खन्ना	57–61
16. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श और सामाजिक बदलाव–कु0 रजनी	62–67
17. भारतीय लोक साहित्य और ऋतुएं–डॉ0 रमाशंकर यादव	68–73
18. दुष्यंत कुमार के साहित्य का अन्त:संघर्ष–रवीन्द्र सिंह	74–79
19. दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों का आम जीवन पर प्रभाव–शिवानी शर्मा एवं डॉ0 ओ0 पी0 सिंह	80–84
20. अंगारों की तासीर खोजते कवि दुष्यन्त कुमार–डॉ0 संजन कुमार	85–88
21. दुष्यन्त कुमार की ग़ज़ल में सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ–सबिता पॉल	89–93
22. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श और सामाजिक बदलाव महादेवी वर्मा के गद्य विधा में स्त्री विमर्श–पिंकी पवार	94–96
23. सामाजिक संस्कृति : भाषा और साहित्य–डॉ0 निशा शर्मा	97–101
24. दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में समाज और राजनीति के कुछ अंश–काजल पौनिया एवं डॉ0 अंजू बंसल	102–106
25. ग़ज़ल विधा एवं दुष्यंत कुमार के ग़ज़लों का शिल्प विधान–डॉ0 किरन	107–110
26. समकालीन हिंदी कविता और समकालीन हिंदी ग़ज़ल की मूल संवेदनाओं में अंतर्सम्बन्ध–शिव नारायण सिंह	111–117
27. दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों में समाज और राजनीति–हीना	118–122
28. सामाजिक परिप्रेक्ष्य में वर्तमान ग़ज़लों की व्यापकता–अदीबा नाज	123–126
29. दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में राजनीतिक चेतना–डॉ0 धर्मेन्द्र कुमार एवं डॉ0 निदा खान	127–130
30. भारतीय सिनेमा और हिन्दी ग़ज़ल का अन्तर्सम्बंध एवं साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन–डॉ0 चेतना शाक्य	131–134
31. स्त्री विमर्श से स्त्री मुक्ति आन्दोलन–आयुष बघेल	135–137
32. जैव–विविधता संरक्षण में हिन्दी साहित्य की भूमिका–अभिषेक राजपूत, कनिका चौधरी एवं सी0डी0 शर्मा	138–145
33. ग़ज़ल में समय की स्याही समकालीन हिंदी ग़ज़ल का परिदृश्य–अनुज यादव	146–151
34. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श और सामाजिक बदलाव–डॉ0 कविता रानी	152–159
35. दुष्यंत कुमार की कविताओं में सामाजिक यथार्थ : एक अनुशीलन–डॉ0 राम भरोसे	160–165
36. हिन्दी साहित्य में ग़ज़ल विधा–अभिनव कुमार पाठक	166–171
37. आमजन की पीड़ा के पक्षधर ग़ज़लकार दुष्यन्त कुमार–डॉ0 दीपिका आत्रेय	172–173
38. दुष्यंत कुमार की ग़ज़ल में सामाजिक चेतना–डॉ0 मनोहर जगधाडे	174–175
39. दुष्यंत कुमार के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन–शिवम त्यागी	176–180
40. रामचरित मानस : भारतीय संस्कृति और परंपराओं का संवाहक–डॉ0 पूनम चौहान एवं डॉ0 ए0 के0 एस0 राणा	181–184
41. Social Importance of Dushyant Kumar's Ghazals-Dr. Vinita Pandey	185–188
42. What caused " a tragic story of whole life" in five words? ' My Last Duchess' An Analysis -Dr. Sonal Shukla	189–192

समकालीन हिंदी कविता और समकालीन हिंदी ग़ज़ल की मूल संवेदनाओं में अंतर्सम्बन्ध

शिव नारायण सिंह
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर
हिन्दी विभाग
डी.बी.एस. कॉलेज, कानपुर

साहित्य और मनुष्य का रिश्ता बहुत प्राचीन व घनिष्ठ है। साहित्य की विविध विधाओं में मनुष्य के जीवन संदर्भों के विविध पक्षों को प्रक्षेपित व विश्लेषित किया जाता है। सामान्यतः 1970 ई के बाद लिखे जा रहे हिंदी साहित्य को समकालीन हिंदी साहित्य कहा जाता है। साहित्य के संदर्भ में समकालीनता का अर्थ कालबोधक रूप में न ग्रहण कर मूल्यबोधक रूप में ग्रहण करना चाहिए। कुमार अंबुज समकालीन कविता के विषय में लिखते हैं– "समकालीन कविता का अर्थ एक समय में लिख रहे कवियों की कविता भर से नहीं बल्कि अपने समय, काल की प्रमुख प्रवृत्तियों और यथार्थ को दर्ज करने के उपक्रम में देखा जाना चाहिए। केवल अर्थ लेकर हम साहित्य की समकालीनता को समझने में चूक कर सकते हैं।"[1] जन सामान्य के दुख, दर्द, नैराश्य, आशा, आकांक्षा, वेदना, उत्साह को अभिव्यक्त करने की सबसे सहज विधा कविता और गजल रही है। यही कारण है कि समकालीन हिंदी कविता और समकालीन हिंदी गजल की मूल संवेदनाएं एक दूसरे से गहरे स्तर पर संपृक्त नजर आती हैं। जिसे विश्लेषित करना इस लेख का उद्देश्य है।

समकालीन हिंदी कविता अकविता जैसे निषेधवादी काव्य प्रवृत्ति की प्रतिक्रिया स्वरूप जन्मा काव्यान्दोलन है। यही कारण है कि जीवन की तमाम विद्रूप स्थितियों के बावजूद भी आशावादिता समकालीन हिंदी कविता का स्थायी भाव है। कठिन से कठिन स्थिति में भी आशा और उत्साह के बीज समकालीन कविता तलाश लेती है। इस संदर्भ में केदारनाथ सिंह की एक कविता 'पृथ्वी रहेगी' दृष्टव्य है–

"मुझे विश्वास है
यह पृथ्वी रहेगी
यदि और कहीं नहीं तो मेरी हड्डियों में
यह रहेगी जैसे पेड़ के तने में
रहती हैं दीमकें
जैसे दाने में रह लेता है घुन
यह रहेगी प्रलय के बाद भी मेरे अन्दर
यदि और कहीं नहीं तो मेरी जबान
और मेरी नश्वरता में
यह रहेगी।"[2]

कवि स्पष्ट कहता है कि जब सब कुछ खत्म हो जाता है उसके बाद भी कुछ न कुछ जरूर शेष रह जाता है और जीवन इसी रह गए शेष से पुनः शुरू होता है। यही जीवन की रीति है। समकालीन हिंदी गजल भी आशावाद का दामन नहीं छोड़ती और दुरूह से दुरूह स्थिति में हार न मानने और पलायन न स्वीकार करने की पक्षधर नजर आती है। दुष्यंत कुमार अपनी एक गजल में कहते हैं कि हताशा या निराशा जीवन का एक अंग हो सकता है लेकिन जीवन स्थायी भाव नहीं –

"मत कहो आकाश में कुहरा घना है
यह किसी की व्यक्तिगत आलोचना है।"[3]

समकालीन हिंदी कविता किसी भी तरह की अराजकता का विरोध करती है। आम आदमी के पक्ष में खड़े होना समकालीन कविता की एक स्वाभाविक और मूलभूत वृत्ति है। शोषणकारी शक्तियों का विरोध करना उनके दुष्चक्रों व दमनकारी षडयंत्रों को उजागर करना, समकालीन कविता अपना कर्तव्य समझती है–

"साव उधार का, माँगा–चाहा
नमक–तेल, हींग–हल्दी तक

सब कर्जे का
यह शरीर भी उनका बंधक
अपना क्या है
इस जीवन में सब तो लिया उधार
सारा लोहा उन लोगों का
अपनी केवल धार।"

गरीब, शोषित,वंचित लोगों पर हो रहे शोषण का विरोध करना और उन शोषणकारी शक्तियों पर कुठाराघात करना समकालीन हिंदी गजल की भी मूल प्रवृत्ति है। गरीब व्यक्ति को दोयम दर्जे का मनुष्य समझे जाने के विचार का समकालीन हिंदी गजल तल्ख लहजे में विरोध करती है–

"ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा।
मैं सजदे में नहीं था,आपको धोखा हुआ होगा।।"

वेदना और करुणा भारतीय काव्य का उत्स रहा है। आदिकवि के कंठ से पहली कविता क्रौंच पक्षी की वेदना देखकर ही फूटी थी। वेदना संवेदना की आधार भित्ति होती है। समकालीन कवि छायावादी कवियों की तरह गलदश्रु तो नहीं किंतु जीवन के कटु यथार्थ की अभिव्यक्ति करते–करते गाहे–बगाहे अपने मन की अतल गहराइयों के किसी कोने में छिपी वेदना प्रकट करता अवश्य दिखाई देता है–

"कसैले – खट्टे आमले का कठबीज है दिल
मरूँ तो गाड़ना नहीं, जला देना मुझे
कसैले फलों का पेड़ किसी के काम का नहीं होता।"

गजल और वेदना में फूल और मिट्टी का संबंध रहा है। गजल का बगीचा वेदना की मिट्टी से ही जीवन रस प्राप्त करता रहा है। समकालीन जीवन स्थितियों की विविधता ने गजल की विषय वस्तु में अनेक नए विषयों को जोड़ा अवश्य है किंतु वेदना आज भी गजल का प्राण तत्व है। मन की गांठे खोलने की सबसे उपयुक्त विधा गजल ही रही है–

"रोज किया करता हूँ मैं साँसों की तुरपाई,
रोज न जाने कितनी बार उधड़ता भी हूँ मैं।"

समकालीन हिंदी कविता द्विवेदी युग से शुरू हुई उस काव्य यात्रा का उच्चतम शिखर है जहां कविता में आम जन व जीवन के साधारण दृश्यों को काव्य का विषय बनाए जाने की सिफारिश पहली बार की गई थी। समकालीन हिंदी कविता में डेली पैसेंजर, किवाड़, समोसा, छिपकली, तंबाकू जैसे विषयों पर भी कविताएं लिखी जा रही हैं। काव्यवस्तु के रूप में ये विषय अब समकालीन हिंदी कविता में पूरी गरिमा के साथ प्रतिष्ठित भी हो चुके हैं। केदारनाथ सिंह की कविता 'टमाटर बेचने वाली बुढ़िया' इस दृष्टि से दृष्टव्य है –

"अब बुढ़िया के हाथ
टमाटरों से खेल रहे हैं
वह एक भूरे टमाटर को धीरे से उठाती है
और हरी पत्तियों के नीचे
छिपा देती है–माँ की तरह"

समकालीन हिंदी गजल भी जीवन के आम रोजमर्रा के यथार्थपरक दृश्यों को विषयवस्तु बनाने से गुरेज नहीं करती। बटुली में भात पकाती मां, मवेशी चराते चरवाहे, सब्जी बेचने वाली बुढ़िया आज की गजल की विषयवस्तु बन चुके हैं–

"बूढ़ी सब्जीवाली को है अपने कुनबे की चिंता।
सब्जी लेकर जब आएगी तिरछा करके तोलेगी।"

पूंजीवाद व बाजारवाद से जन्मी उपभोक्तावादी संस्कृति ने जहां जीवन को सुख–सुविधा पूर्ण बनाया है तो साथ ही मनुष्य को उसकी जड़ों से, सहजताओं से काट भी दिया है। बाजारवाद ने मनुष्य की चेतना को इस तरह कुंद कर दिया है कि वह आवश्यकता और

विलासिता के बीच विभेदक रेखा खींचना ही भूल चुका है। अपनी असीमित इच्छाओं के पिंजरे में मनुष्य स्वयं कैद होता जा रहा है। संबंधों का निर्माण उपयोगिता की भित्ति पर किया जा रहा है। समकालीन हिंदी कविता उपभोक्तावादी संस्कृति की इन्हीं क्रूरताओं को उद्घाटित करने का जीवंत दस्तावेज है। "बीसवीं सदी के इन अंतिम वर्षों में उत्पादन की शोषणपरक प्रक्रियाओं को अधिक से अधिक रेशनालाइज करने के लिए विश्व उपभोक्तावाद के नये रूप सामने हैं। मनुष्य की इच्छाओं और मूल्यदृष्टि को निर्मित और नियंत्रित किया जा रहा है, उन्हें एक खास दिशा दी जा रही है। खुशहाली की हमारी बुनियादी जरूरतों, उनके अनुभवों और अर्थों को उपभोगमूलक वस्तुओं की अनिवार्य खरीद और बाजार से निर्मित होने वाले जीवन मूल्यों से जोड़ा जा रहा है।"[10] समकालीन कवि प्रभात अपनी कविता 'याद' में बाजारवाद से जन्मी विसंगतियों के बावजूद भी मनुष्य की कोमल भावनाओं को अक्षुण्ण और अविजित मानते हैं–

"बाजार
हिंसा
सताने वाली व्यवस्था
याद ही को नष्ट कर दे
अभी मैं मानने को तैयार नहीं इसे
यही है वजह
मैं पूछता हूँ सबसे सब जगह
जिन्हें अपने गांव की याद नहीं आती
उन्हें गांव की जगह किसकी याद आती है?"[11]

समकालीन हिंदी गजल भी उपभोक्तावादी संस्कृति से उपजी इन क्रूरताओं का न सिर्फ पर्दाफाश करती है बल्कि मनुष्यता के पक्ष में खड़े होकर इन मानव विरोधी मूल्यों को प्रत्युत्तर भी देती है–

"जब मेरे घर के पास कहीं भी नगर न था
तो इस तरह का राह में लुटने का डर न था।
जंगल में जंगलों की तरह का सफर न था
सूरत में आदमी की कोई जानवर न था।"[12]

राजनीति के साथ कविता के संबंध के जो बीज प्रगतिवाद में आरोपित हुए थे, समकालीन हिंदी कविता उसी का प्रौढ़ रूप है। समकालीन हिंदी कविता में राजनीतिक नारेबाजी का स्थान कवि की गहन सामाजिक चेतना ने ले लिया है। कवि राजनीति के सूक्ष्म स्तरों को पहचान कर उससे उत्पन्न होने वाली विडंबनाओ और विकृतियों को कविता की शक्ल में ढाल देता है। यही कारण है कि समकालीन दौर की राजनीतिक कविताएं भी साहित्यिक दृष्टि से कमजोर नहीं दिखाई देतीं। आठवें दशक के बाद लिखी गई हिंदी कविता में एक बड़ा हिस्सा वह है जिसमें राष्ट्र के नागरिकों के लिए लोकतंत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता आदि को सुलभ बनाने की चिंता जाहिर की गई है। समकालीन कविता में कवि स्वयं की और लोकतंत्र की गहरी समीक्षा करता दिखाई देता है। देश की आजादी को लेकर जनता में बहुत उत्साह था किंतु आजादी के बीस साल बीत जाने के बाद भी जब आम जनता की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दिया तब कवि धूमिल हताश और निराश होकर लोकतंत्र की समीक्षा करते हुए 'बीस साल बाद' कविता में लिखते हैं–

"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब होता है?"[13]

आपातकाल के बाद लिखी गई हिंदी गजल में भी राजनीतिक चेतना मुखर रूप में अभिव्यक्त होने लगती है। गजल की विषयवस्तु प्रेम और प्रकृति से निकलकर आम आदमी के दुःख– दर्द, सत्ता–मीमांसा व राजनीतिक समीक्षा की ओर उन्मुख होती है। जिस तरह आपातकाल के पश्चात समकालीन हिंदी कविता में अनेक कवियों ने लोकतंत्र के हनन के विरुद्ध अपनी लेखनी उठाई वही कार्य समकालीन हिंदी गजलकारों ने भी किया। दुष्यंत कुमार, अदम गोंडवी की गजलों में राजनीतिक चेतना स्पष्ट नजर आती है। राजनीति के

साथ–साथ नौकरशाही व्यवस्था की विद्रूपताओं को भी समकालीन हिंदी गजलकारों ने बेनकाब किया है। आम आदमी के लिए शुरू की गई सरकारी योजनाओं का लाभ किस तरह नौकरशाही व्यवस्था हजम कर जाती है। इसका जिक्र दुष्यंत कुमार इस तरह करते हैं–

"यहाँ तक आते–आते सूख जाती हैं कई नदियाँ
मुझे मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।"

किसी कालजयी कृति, इतिहास या मिथक के प्रमुख पात्र को आधार बनाकर समकालीन हिंदी कविता में अनेक कविताओं का सृजन किया गया है। इस संदर्भ में आलोकधन्वा की यह कविता उल्लेखनीय है–

"दादी के लिए रोटी बनाने का चिमटा लेकर
ईदगाह के मेले से लौट रहे नन्हे 'हामिद' ने
और छह दिसम्बर के बाद फरवरी आते आते जंगली बेर ने
इन सबने बचाया मेरी आत्मा को।"

किसी कालजयी रचना, मिथक या इतिहास के प्रमुख पात्र को आधार बनाकर वर्तमान मुद्दे पर अपनी चिंता जाहिर करना समकालीन हिंदी गजल का भी एक अनोखा तरीका है। यह प्रवृत्ति अदम गोंडवी की एक गजल के इस शेर स्पष्ट दिखाई देती है–

"न महलों की बुलंदी से न लफ्जों के नगीने से
तमद्दुन में निखार आता है घीसू के पसीने से।"

यहां आलोक धन्वा की कविता में मुंशी प्रेमचंद की सुप्रसिद्ध कहानी 'ईदगाह' के प्रमुख पात्र 'हामिद' को तो अदम गोंडवी के शेर में मुंशी प्रेमचंद की ही सुप्रसिद्ध कहानी 'कफन' के पात्र 'घीसू' को आधार बनाकर काव्य का कथानक निर्मित किया गया है। यहां हमें समकालीन हिंदी कविता और समकालीन हिंदी गजल की संवेदनाएं एक दूसरे से सम्पृक्त नजर आती हैं।

समकालीन कविता में प्रेम को आदर्श मानवीय मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। इधर प्रेम पर अनेक कविताएं लिखी गई हैं और लगातार लिखी जा रही हैं। प्रेम काव्य का शाश्वत विषय रहा है। संपूर्ण विश्व में जहां भी, कुछ भी लिखा गया है, वहां प्रेम पर अवश्य लिख गया है और भरपूर लिखा गया है। समकालीन दौर में जीवन स्थितियों के बदलने से मूल्यों में भी परिवर्तन आया है। भौतिकवादी स्थितियों ने प्रेम को अनुपयोगी और हाशिए की वस्तु तथा पुराने जमाने का सिक्का बना दिया है। ऐसे में बद्री नारायण अपनी कविता 'प्रेमपत्र' में प्रश्न करते हैं कि भौतिकता की इस अंधी दौड़ में प्रेम जैसी कोमल भावनाओं को स्वार्थ के पैरों तले कुचले जाने से बचाना कैसे संभव होगा –

"प्रलय के दिनों में
सप्तर्षि, मछली और मनु
सब वेद बचाएँगे
कोई नहीं बचाएगा प्रेमपत्र
कोई रोम बचाएगा
कोई मदीना
कोई चाँदी बचाएगा,
कोई सोना
मैं निपट अकेला
कैसे बचाऊँगा तुम्हारा प्रेमपत्र।"

प्रेम गजल का परंपरागत विषय रहा है। समकालीन हिंदी गजलकारों ने प्रेम को एक मूल्य के रूप में अपनी काव्यवस्तु बनाया है। प्रेम एक शाश्वत मूल्य है। किसी भी कालखंड का साहित्य प्रेम से बिल्कुल विलग नहीं रह सकता। अनेक विद्वानों ने प्रेम को अपनी– अपनी तरह से परिभाषित किया है। डॉ० रोहिताश्व अस्थाना ने प्रेम को परिभाषित करते हुए कहा है – "प्रेम मन की एक कोमल एवं पवित्र भावना है। जिसकी अनुभूति से आत्मा का उन्मीलन होता है और आनंद की प्राप्ति होती है। प्रेम ही जीवन का प्राण है। प्रेम के आभाव में संसार की

समस्त छटायें सूनी एवं अस्तित्वहीन प्रतीत होती है। जिस प्रकार जल के अभाव में हरी भरी वसुंधरा मरुभूमि बन जाती है वैसे ही प्रेम से शून्य हृदय प्रस्तर से भी कठोर हो जाता है।"[18]

समकालीन सामाजिक विडम्बनापरक परिस्थितियों को देखते हुए अधिकांश गजलकारों ने स्त्री–पुरुष के आकर्षणमूलक प्रेम को परिधि पर ही रखा है, बावजूद इसके जो भी गजलें प्रेम आधारित लिखी गई वह विशुद्ध भावना व सच्चे अनुभव की गहराइयों से उपजी हैं। जो मौलिकता व घनत्व की दृष्टि से अपनी पूर्ववर्ती परंपरा में लिखी गई गजलों से अधिक प्रभावशाली हैं क्योंकि यहां प्रेम में भावना के साथ–साथ यथार्थ का भी अद्‌भुत संयोग दिखाई देता है। यहां का प्रेम किराए का प्रेम नहीं है बल्कि हृदय की अतल गहराइयों में अंकुरित प्रेम है। कुंवर बेचैन, जहीर कुरैशी, ज्ञानप्रकाश विवेक, गोपालदास 'नीरज', दुष्यंत कुमार आदि ने अनेक प्रेमपरक गजलें लिखी हैं। कुंवर बेचैन की एक गजल दृष्टव्य है–

"यह किसे मालूम था वो वक्त भी आ जायेगा
आप मेरी जिंदगी के राशिफल हो जायेंगें।
भोर की पहली किरन बनकर जरा छू दीजिये
आपकी सौगंध हम खिलकर कमल हो जायेंगे।"[19]

समकालीन हिंदी कविता में स्त्री के विविध रूपों, विविध छवियों को उकेरने करने का प्रयास किया गया है। स्त्री को काव्य वस्तु बनाकर इसके पूर्ववर्ती काव्य आंदोलन में भी निरंतर कविताएं लिखी जाती रही हैं किंतु समकालीन हिंदी कविता स्त्री को उसके पूरे परिवेश के साथ, पूर्ण यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति प्रदान करती है। जहां स्त्री को लेकर न कोई यूटोपिया है न कोई पूर्वाग्रह। यहां स्त्री अबला नहीं है पूर्ण मनुष्य है, उतनी ही मनुष्य जितना पुरुष है, न उससे कुछ कम न उससे कुछ ज्यादा। यहां स्त्री को काव्य वस्तु बनाकर यदि 'ब्रूनो की बेटियां' जैसी कविता लिखी जाती है तो 'प्रेम में डूबी हुई मां' और 'ट्राम में एक याद' सरीखी कविताएं भी लिखी जाती हैं। समकालीन कविता स्त्री के विविध रूपों को एक साथ अभिव्यंजित करती है। जिसमें उसके हंसते, गाते, रोते, खीझते, आह्लादित होते जीवन की कथा है किंतु अपराजेयता सारे चित्रों का स्थायीभाव है –

"वे समुद्रों से नहाकर लौटीं तो खाना बनाया
सितारों को छूकर आईं तब भी
उन्होंने कई बार सिर्फ एक आलू एक प्याज से खाना बनाया
और कितनी ही बार सिर्फ अपने सब्र से
दुखती कमर में, चढ़ते बुखार में
बाहर के तूफान में
भीतर की बाढ़ में उन्होंने खाना बनाया
फिर वात्सल्य में भरकर
उन्होंने उमगकर खाना बनाया।"[20]

समकालीन हिंदी गजल भी उस पुरुष वर्चस्वी मानसिकता के खिलाफ एक सशक्त दस्तावेज है जो स्त्री को कुछ कमतर, कुछ दोयम दर्जे का समझती है। समकालीन हिंदी कविता की तरह हिंदी गजल में महिला रचनाकारों की संख्या तो वैसी नहीं है किंतु स्त्री अस्मिता के पक्ष में पुरुष गजलकारों ने उसी शिद्दत के साथ कलम चलाई है जैसी समकालीन हिंदी कविता में महिला रचनाकारों ने। स्त्री पेड़, पौधे, पत्थर, भवन से भिन्न एक स्वतंत्र चेतनशील प्राणी है, जिसकी अपनी निजता है, अस्तित्व है, अस्मिता है। डॉ० भावना श्रीवास्तव स्त्री अस्मिता का प्रश्न इस तरह उठाती हैं–

"रिसने लगेंगे जख्म यकीनन ही शजर के,
मैंने भी इक निशान कहीं गर बना दिया।"[21]

संयुक्त परिवारों के विघटन, शहरीकरण, गांवों से शहरों की ओर पलायन इत्यादि नवीन जीवन स्थितियों के चलते स्त्री– पुरुष संबंधों में भी बदलाव आए हैं। समकालीन कविता जीवन के किसी बिल्कुल सामान्य से दिखने वाले दृश्य के बीच से स्त्री–पुरुष संबंधों में आ

रही दरारों के चित्र खींच लेती है। केदारनाथ सिंह ने अपनी कविता 'नमक' के माध्यम से मध्यवर्गीय भारतीय परिवार में पसरते जा रहे मनमुटाव, असिष्णुता व स्त्री–पुरुष संबंधों में फैल रही कटुता को इस तरह अभिव्यक्त किया है –

"पुरुष जो कि सबसे अधिक चुप था
धीरे से बोला–
"दाल फीकी है"
"फीकी है?"
स्त्री ने आश्चर्य से पूछा
"हाँ, फीकी है–
मैं कहता हूँ दाल फीकी है"
पुरुष ने लगभग चीखते हुए कहा।"[22]

दाल न सही लेकिन उस घर में कुछ न कुछ ऐसा जरूर है जो बहुत फीका हो गया है, उष्माहीन हो गया है। आज के दौर में संबंधों को निभाया नहीं बल्कि ढोया जा रहा है। संबंधों के फीकेपन की चिंता समकालीन हिंदी गजल भी उसी शिद्दत से करती है।

"पेड़ों पर तो नाम लिखो मत, पेड़ों को पीड़ा होगी
जैसे हमने सम्बन्धों की, हर खुरचन के संग भोगी।"[23]

समकालीन हिंदी कविता व गजल में भारतीय पारिवारिक जीवन की अनेक अनकही छवियां चित्रित होती हैं। स्त्री–पुरुष संबंधों में आए बदलावों पर भी दोनों की पैनी दृष्टि है। एक ही छत के नीचे रह रहे पति–पत्नी में अहम भावना ने घर करके उनके संबंधों को किस तरह खोखला कर दिया है, समकालीन हिंदी कविता व गजल इस तरह के नवीन जीवन संदर्भों की न सिर्फ पड़ताल करती हैं बल्कि इन विडंबनाओं के कारक तत्वों की शिनाख्त करते हुए इनसे मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं –

"दैनिक संकोचों को भूलकर
हमने एक–दूसरे को
घर के नामों से पुकारा
हमारे शरीर से टूटकर
अलग हुआ चाँद
हमने उसे शब्दों में नहीं मरने दिया
आँखों में उगे सूरज की पतंग उड़ाई
हम पानी की तरह बहे
नमक जैसे घुलते रहे
कुछ मामूली उम्मीदों के बारे में सोचा
पराजयों को याद किया
अपनी मूर्खताएँ बताकर
हल्के हो गये हम
हमने घड़ी नहीं देखी
किसी से समय नहीं पूछा
हमने थोड़ा–सा वक्त चुराया
और आपस में बाँट लिया।"[24]

समकालीन हिंदी कविता और समकालीन हिंदी गजल की मूल संवेदनाओं से गुजरते हुए हम पाते हैं कि ये दोनों विधाएं भेदती हैं हमें मन की गहराइयों तक, बाध्य करती हैं हमें मान्यताओं व परंपराओं पर पुनर्विचार के लिए, कभी व्यथित करती हैं तो कभी झकझोर देती हैं हमारे व्यक्तिगत व सामाजिक आस्था को और फिर उड़ेल देती हैं, धीरे से, उन आदर्श मानवीय मूल्यों को, जहां से होकर गुजरती है– समानता, स्वतंत्रता व बंधुत्व की राह।

संदर्भ :

1. संपा० राय, ऋत्विक, लमही, विवेक खंड, गोमती नगर, लखनऊ, जनवरी–जून 2023, पृष्ठ 67
2. सिंह, केदारनाथ, प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 1985, पृष्ठ 14
3. कुमार, दुष्यंत, साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृष्ठ 27
4. कमल, अरुण, प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ 19
5. कुमार, दुष्यंत,साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2019, पृष्ठ 15
6. संपा० शुक्ला, प्रेमशंकर, पूर्वग्रह, अंक 166– 67, भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल, जुलाई – दिसंबर 2019, पृष्ठ 57
7. अनूप, वशिष्ठ, हिंदी गजल का परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2024, पृष्ठ 102
8. सिंह, केदारनाथ, प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 11
9. अनूप, वशिष्ठ, हिंदी गजल का परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2024, पृष्ठ 18
10. कुमार, विजय, कविता की संगत, आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा,संस्करण 2012 पृष्ठ 11
11. प्रभात, जीवन के दिन, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2020, पृष्ठ 13
12. बेचैन, कुंवर, आंधियों धीरे चलो, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2014, पृष्ठ 107
13. धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2013, पृष्ठ 11
14. कुमार, दुष्यंत, साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2019, पृष्ठ 15
15. आलोकधन्वा, दुनिया रोज बनती है, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृष्ठ 86
16. संपा० निश्चल, ओम, धरती की सतह पर, अनुज प्रकाशन, संस्करण 2023, पृष्ठ 64
17. संपा० अंविता, अब्बी, उर्वर प्रदेश, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2010, पृष्ठ 128
18. अस्थाना, डॉ० रोहिताश्व, हिंदी गजल : उद्भव और विकास, सुनील साहित्य सदन, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 2010, पृष्ठ 23
19. बेचैन, डॉ० कुंवर, महावर इंतजारों का, प्रगति प्रकाशन, गाजियाबाद, संस्करण 1983, पृष्ठ 31
20. अंबुज, कुमार, प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2020, पृष्ठ 118
21. अनूप, वशिष्ठ, हिंदी गजल का परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2024, पृष्ठ 28
22. सिंह, केदारनाथ, प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 98
23. अनूप, वशिष्ठ, हिंदी गजल का परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2024, पृष्ठ 28
24. कुकरेती, हेमंत, जल कभी कभी जाल, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008, पृ० 66